आकलन : यह चीज क्या है?

सुजाता राव



1976 में ए. एफ. चार्म्स ने पहली बार वह पुस्तक प्रकाशित की थी जिसका कौतूहल जगाने वाला शीर्षक था 'विज्ञान कहलाने वाली यह चीज क्या है?' उस पुस्तक में उसने विज्ञान की प्रकृति के बारे में आधुनिक दृष्टिकोणों से पाठकों का परिचय कराने का प्रयास किया था। जैसे-जैसे उसमें चार्म्स ने वैज्ञानिक चिन्तन के विभिन्न पहलुओं, जैसे कि प्रयोग करना, किसी धारणा को मिथ्या सिद्ध करने की सम्भावना (फाल्सिफेकशन), कुह्न का प्रतिमान (पैराडाइम) तथा बेइसियन पद्धति, आदि को समझाया, तो जल्दी ही यह स्पष्ट हो गया कि "वैज्ञानिक" ज्ञान की जाँच-पड़ताल की प्रकृति की यदि कोई विशेष खूबी है तो वह उसका अत्यन्त जटिल होना है। हम अपने को भी तब काफी कुछ वैसी ही स्थिति में पाते हैं जब हम "आकलन" - जो अत्यन्त जटिल है और जिसे अक्सर एक अनोखी धारणा की तरह सीमित कर दिया जाता है - कहलाने वाली इस चीज की पर्तें खोलना शुरू करते हैं।

शिक्षा में आकलन क्या है? इसे साक्ष्यों के सावधानीपूर्वक किए गए परीक्षण के द्वारा किसी व्यक्ति या किसी शैक्षणिक कार्यक्रम के बारे में निर्णय लेने की एक प्रक्रिया के रूप में सीधे-सीधे परिभाषित किया जा सकता है। आकलनों का महत्त्व मूल्यांकन करने के औजारों की तरह है क्योंकि ये शैक्षणिक प्रक्रियाओं तथा उनके परिणामों के बारे में बुनियादी सवालों - हम कक्षाओं में क्या पढ़ा रहे हैं, विद्यार्थी सीखने की सामग्री के साथ किस तरह काम कर रहे हैं, स्कूल के परिवेश में कैसा ज्ञान दिया जा रहा है, सीखी गई बातों को विद्यार्थी किस तरह आत्मसात और उपयोग कर रहे हैं, संसार के जानकार तथा फिक्रमन्द नागरिकों के रूप में विद्यार्थी कैसे विकसित हो रहे हैं? - के उत्तर देने में मदद करते हैं। आकलन रचनात्मक मूल्यांकन, अर्थात रोजमर्रा के अध्यापन का सतत चलने वाला ऐसा हिस्सा जिसके माध्यम से शिक्षक विद्यार्थियों के साथ की जाने वाली अपनी गतिविधियों में संशोधन करते हैं, हो सकते हैं। वे योगात्मक मूल्यांकन हो सकते हैं जो वर्ष के अन्त में शिक्षक को यह जानने और मूल्यांकन करने में सहायक होते हैं कि विद्यार्थी ने क्या सीखा है। इस दृष्टि से प्रामाणिक भी हो सकते हैं कि वे इसका मूल्यांकन करने का प्रयास करते हैं कि सीखी गई बातों को विद्यार्थियों द्वारा लम्बी अवधि में किस तरह लागू किया जाता है। उस दृष्टिकोण से देखने पर आकलन शैक्षणिक प्रक्रियाओं का समग्र रूप से मूल्यांकन करने की सतत प्रक्रिया का अंग होते हैं।

आकलन के रचनात्मक, योगात्मक तथा प्रामाणिक पहलू इसकी समग्रतावादी प्रकृति तथा शिक्षा के भीतर मूल्यांकन के अवसरों की जटिलता, दोनों की ओर संकेत करते हैं। शिक्षा की विशाल औपचारिक व्यवस्थाओं और जिन संस्थानिक तथा संगठनात्मक परिवेशों के भीतर स्कूली शिक्षा घटित होती है, उनके विकास ने आकलनों को विद्यार्थियों के सीखने की एक कहीं अधिक सँकरी तथा उपकरणात्मक धारणा बना देने का काम किया है।

जैसे-जैसे संसार के विभिन्न देशों ने सार्वजनिक स्कूल व्यवस्थाओं पर अधिक राशि खर्च करना प्रारम्भ किया, वैसे-वैसे उस व्यय को लेकर जवाबदेही की आवाजें भी उठाई जाने लगीं। जवाबदेही की यह आवाज 'नए सार्वजनिक प्रबन्धन' (फर्ली ऐशबर्नर, फिटजेराल्ड एण्ड पीटीग्रिउ, 1996) की धारणाओं, जो विद्यार्थियों के प्रदर्शन के लिए स्कूलों के उत्तरदायी होने की माँग करती थीं, के अन्तर्गत विशेष रूप से अधिक जोर से उठाई गई। इसके परिणामस्वरूप शिक्षा के लिए गठित बोर्डों ने मानकीकरण - मानक पाठ्यक्रम, मानकीकृत शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम, मानक पाठ्यपुस्तकें और यहाँ

तक कि सीखने-सिखाने की मानक सामग्री भी - के माध्यम से स्कूली शिक्षा की प्रक्रिया को नियंत्रित करने का प्रयास किया (रोवन,1990)। नियंत्रण की इस रणनीति की केन्द्रीय धारणा यह थी कि शिक्षा में निवेशित किए जाने वाले सभी साधनों (इनपुट्स) के मानकीकरण के माध्यम से, मानकीकृत उत्पाद (आउटपुट्स) या परिणाम निकलकर सामने आएँगे - जो इस मामले में स्कूलों में विद्यार्थियों के प्रदर्शन और उनके सीखने के प्रमाण के रूप में होंगे।

इन निवेशित साधनों के मानकीकरण ने नीति निर्धारकों, शिक्षा बोर्डों तथा पाठ्यक्रमों का विकास करने वालों को स्कूली प्रक्रिया के विभिन्न स्तरों पर मानकीकृत परीक्षाएँ - अलग-अलग विशिष्ट विषयों के लिए, विशिष्ट कक्षाओं या स्तरों के लिए - विकसित करने में भी सहायता की और इस तरह व्यक्तिगत तथा सामूहिक, दोनों स्तरों पर सिखाने और सीखने का मूल्यांकन कर सकना सम्भव बना दिया। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि पाँचवीं कक्षा का कोई विद्यार्थी अपनी कक्षा के अन्य विद्यार्थियों के साथ, तथा सारे राज्य तथा सारे देश में पाँचवीं कक्षा के सभी विद्यार्थियों के साथ, गणित की मानकीकृत परीक्षा में बैठे। ऐसी परीक्षा से उस विषय में उसके व्यक्तिगत प्रदर्शन का मूल्यांकन न केवल कक्षा पाँच की गणित के लिए पाठ्यचर्या में तय किए गए दिशा-निर्देशों के सापेक्ष हो सकता है बल्कि, उसके प्रदर्शन का मूल्यांकन कक्षा के उसके अन्य साथियों के सापेक्ष, कक्षा पाँच की उसी परीक्षा में बैठने वाले देश भर के विद्यार्थियों के सापेक्ष और अन्तर्राष्ट्रीय रूप से अन्य देशों में उसी कक्षा के विद्यार्थियों के सापेक्ष भी हो सकता था। इसके परिणामस्वरूप, खराब प्रदर्शन करने वाले विद्यार्थियों, खराब प्रदर्शन करने वाली कक्षाओं, खराब प्रदर्शन करने वाले स्कूलों तथा खराब प्रदर्शन करने वाले देशों, सभी का एक साथ मूल्यांकन किया जा सकता था। इसलिए खराब प्रदर्शन करने वाली कक्षाओं के लिए शिक्षकों को जवाबदेह ठहराया जा सकता था। प्राचार्यों तथा स्कूल बोर्डों को खराब प्रदर्शन करने वाले स्कूलों के लिए जवाबदेह ठहराया जा सकता था। जिला बोर्डों/शिक्षा विभागों को खराब प्रदर्शन करने वाले जिलों तथा राज्यों के लिए जवाबदेह ठहराया जा सकता था और अन्तत: राष्ट्रीय शैक्षणिक निकायों को खराब प्रदर्शन करने वाले राष्ट्रों के लिए जवाबदेह ठहराया जा सकता था। इस तरह, मानकीकरण तथा नियंत्रण करने की रणनीतियों की अपील स्पष्ट और तर्कसंगत थी। माना गया कि जवाबदेही के ऐसे दबावों के चलते गुणवत्तापूर्ण शिक्षा निकलकर सामने आएगी।

ऐसे उपायों का प्रभाव, निश्चित रूप से, ऐसी अपेक्षाओं के बिलकुल विपरीत पड़ा है और वह आज हमें एकदम स्पष्ट दिखाई देता है। मानकीकरण के अभियान के परिणामस्वरूप कक्षा में शिक्षक की स्वायत्तता का अभाव हो गया है और उसने शिक्षा व्यवस्था में सीखने वाले के निजी व्यक्तित्व को अदृश्य बना दिया है। साथ ही, इसकी परिणति विद्यार्थियों की सीखने की अपनी स्वाभाविक गति का अनुसरण करने की असमर्थता में तथा सन्दर्भों से कटे हुए ऐसे पाठ्यक्रम के प्रचलन में हुई है जिसका विद्यार्थियों के लिए हुए अनुभवों की पृष्ठभूमि में कोई अर्थ नहीं होता। इसका परिणाम यह भी हुआ है कि करीब-करीब एकतरफा जोर पाठ्यक्रम को पूरा करने और परीक्षाओं, जो अक्सर विशुद्ध रूप से योगात्मक आकलन होती हैं, के उद्देश्य से पढ़ाने पर हो गया है, जिसके फलस्वरूप विद्यार्थी रटकर सीखते हैं और निरन्तर परीक्षाओं के तनाव में रहते हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि विद्यार्थी स्कूलों में और स्कूलों से खुद को उत्तरोत्तर अलग-थलग महसूस करते जा रहे हैं। इसके अलावा, निजी संस्थाओं, जिनका ध्यान परीक्षाओं में उत्कृष्ट प्रदर्शन के लिए विद्यार्थियों को "सिखा-पढ़ाकर तैयार करने (ट्यूटरिंग)" पर केन्द्रित रहता है, ने स्कूल के बाहर के बच्चे के मुक्त स्थान और समय को भी धीरे-धीरे समाप्त कर दिया है, जिससे वह लगभग एक ऐसा जीव बनकर रह गया है जो छोटी और बड़ी परीक्षाओं में अच्छा प्रदर्शन करने की तलाश में एक संस्था से दूसरी संस्था तक मारा-मारा फिरता है। शिक्षा की सार्वजनिक व्यवस्था में जवाबदेही लाने के इसके बहु-प्रचारित प्रयासों के बावजूद, नियंत्रण की इस रणनीति के फलस्वरूप, उत्साह तथा अच्छे प्रशिक्षण के अभाव से ग्रस्त शिक्षकों, जीवन-सन्दर्भों से कटे

पाठ्यक्रमों और गहरी उदासीनता और बोझ से दबे विद्यार्थियों वाली एक काम न करने वाली व्यवस्था से अधिक कुछ भी हासिल नहीं हुआ है।

तो आकलनों की धारणा में अब हम कैसे आगे बढ़ें? शायद यहाँ आकर यह नितान्त आवश्यक हो जाता है कि आकलन की अवधारणा को नए सिरे से गढ़ा जाए – शिक्षा के बारे में बुनियादी सवालों का मूल्यांकन करने की पद्धति के रूप में और उन शैक्षणिक प्रक्रियाओं का मूल्यांकन करने के साधन के रूप में जो विद्यार्थियों को अर्थपूर्ण सीखने में भाग लेने में समर्थ बनाती हैं या उसमें बाधा डालती हैं। इसे थोड़ा और समझाने का मुझे अवसर दें। किसी भी शैक्षणिक व्यवस्था के सबसे आधारभूत परिणाम – विद्यार्थियों के लिए अर्थपूर्ण सीखने में संलग्न होने का अवसर – की अनवरत जाँच-पड़ताल ही आकलनों का केन्द्रीय मुद्दा होना चाहिए। आकलनों को उन सभी प्रक्रियाओं की संरचना तथा कार्यप्रणाली का मूल्यांकन करना चाहिए जो विद्यार्थियों को इस तरह से सीखने में सक्षम बनाती हैं या जो इसमें उन्हें बाधा पहुँचाती हैं। उदाहरण के लिए, स्कूल पहुँच सकने के किसी विद्यार्थी के सामर्थ्य का भी आकलन किए जाने की आवश्यकता होती है। लेकिन यहाँ पहुँच का आशय बस्ती के आसपास स्कूल का उपलब्ध होना भर नहीं है, उसे समझने के लिए आगे बढ़कर कुछ अन्य बातों की पड़ताल भी जरूरी है। पहुँच की पड़ताल में बच्चे के घरेलू जीवन का मूल्यांकन और स्कूल जाने के लिए उसको मिलने वाले अवसर तथा प्रोत्साहन, स्कूल पहुँचने के लिए यातायात के साधन की उपलब्धता, बच्चे/उसके माता-पिता की स्कूल पहुँचने के सार्वजनिक यातायात का खर्च उठाने की क्षमता, बच्चों को स्कूल भेजने की परिवार की आर्थिक क्षमता – इन सभी का मूल्यांकन करना जरूरी है।

एकबारगी जब स्कूल तक पहुँच का मूल्यांकन कर लिया जाता है, तब स्कूली शिक्षा की समुचित उपलब्धता का आकलन करने की आवश्यकता होती है। इसके आकलनों में – स्कूल के माहौल, स्कूल के भौतिक परिवेश, स्कूलों में सार्थक ढंग से सीखने के लिए निर्मित सामाजिक-भावनात्मक वातावरण, विद्यार्थियों के लिए सुगम भाषा में जीवन-सन्दर्भों की दृष्टि से प्रासंगिक और अर्थपूर्ण पाठ्यक्रम की उपलब्धता, शिक्षकों के उत्साह तथा प्रतिबद्धता के स्तरों और विद्यार्थियों के साथ अलग-अलग काम कर सकने की शिक्षकों की स्वायत्तता, अपनी स्वाभाविक गति से सीखने में भागीदार होने की विद्यार्थियों की योग्यता, समुदाय तथा माता-पिता की भागीदारी का स्तर और विद्यार्थियों को अपने सीखे हुए ज्ञान का स्कूल के बाहर उपयोग करने के अवसर उपलब्ध होना – इन सभी पहलुओं को शामिल होना चाहिए। इन कारकों का अर्थपूर्ण आकलन उन प्रक्रियाओं को जो स्कूलों में सीखने के स्वस्थ वातावरण को मजबूत बनाती हैं और उन प्रक्रियाओं को भी जो प्रभावी ढंग से सीखने के मार्ग में बाधाओं की तरह काम करती हैं, पहचानने में मदद करता है, और इसके परिणामस्वरूप विद्यार्थियों का प्रामाणिक आकलन सम्भव हो पाता है (पुकेट एवं ब्लैक, 1994)।

आकलन की अवधारणा में ऐसे परिवर्तन कैसे लाए जा सकते हैं? सबसे पहले, ऐसे नीतिगत उपाय किए जाना बेहद जरूरी हैं जो परीक्षाओं में सुधार लाएँ। यदि आकलन तथा शिक्षण को 'परीक्षाओं के लिए पढ़ाने' से आगे बढ़ना है और विद्यार्थियों के सीखने का सतत मूल्यांकन किया जाना है, तो ऐसे नीतिगत उपाय आवश्यक हैं। हम इस बारे में अन्य देशों से सबक ले सकते हैं, जैसे कि नोर्डिक देशों से, जिन्होंने बरसों से कक्षा दर कक्षा विद्यार्थियों की परीक्षाएँ लेने पर रोक लगा रखी है। इसके बजाय, उन्होंने शिक्षक के पेशेवर विकास और कक्षाओं में बच्चों पर केन्द्रित शिक्षण पर तथा इन पद्धतियों के मूल्यांकन पर अपना ध्यान केन्द्रित किया है। कक्षा-आधारित परीक्षण पर संयम रखे जाने के बावजूद, फिनलैण्ड के बच्चे पीसा (पी.आई.एस.ए.) जैसी अन्तर्राष्ट्रीय परीक्षाओं में असाधारण रूप से अच्छा प्रदर्शन करते हैं। स्कूलों में सिखाने तथा सीखने की केन्द्रीय प्रक्रियाओं को मजबूत बनाने में सहायता देने के लिए, हमारे देश में ऐसे नीतिगत उपाय सक्रिय रूप से प्रारम्भ किए जाने की आवश्यकता है जो शिक्षकों के निरन्तर चलने वाले पेशेवर विकास पर जोर देते हों।

दूसरे, ऐसी संस्थाओं को सबल बनाया जाना चाहिए जो हमारे देश में स्कूलों को अकादमिक सहायता प्रदान करती हैं और इन संस्थाओं को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण कारकों का आकलन करने में स्कूलों की सहायता करना चाहिए। तीसरे, हमें शिक्षा की अवधारणा में एक सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता है – जो रटकर सीखने तथा परीक्षाओं में प्रदर्शन से आगे बढ़कर शिक्षा को मनुष्यों की केन्द्रीय क्षमताओं को निर्मित करने की प्रक्रिया के रूप में स्वीकार करे। चौथे, हमें स्कूलों का समग्र रूप से मूल्यांकन करने के लिए उचित उपकरणों की आवश्यकता है, और ऐसे उपकरणों का विकास, परीक्षण तथा मूल्यांकन करने और देश भर में उनका क्रियान्वयन करने के लिए समुचित प्रयास किए जाने की जरूरत है।

शिक्षा की गुणवत्ता का आकलन करने के लिए मूल्यांकन की विधियाँ आवश्यक होती हैं। परन्तु, सीखने के परिणामों का छोटी और बड़ी परीक्षाओं के माध्यम से आकलन करने की प्रक्रिया के रूप में आकलन पर एकतरफा ध्यान केन्द्रित करने के फलस्वरूप नीति निर्माताओं ने शिक्षा के समग्र उद्देश्य तथा अभिप्राय की तथा उनकी प्राप्ति को सम्भव बनाने वाली प्रक्रियाओं की उपेक्षा की है। आकलन कहलाने वाली यह चीज क्या है इसका उत्तर तभी दिया जा सकता है जब हम पहले तीन बुनियादी प्रश्न पूछें : आकलन किसलिए है, वह किसके लिए है तथा वह किस चीज को मापता है? यदि हम इन प्रश्नों के उत्तरों को स्पष्ट और सुसंगत रूप से शिक्षा के लक्ष्यों तथा प्रयोजनों से जोड़ने में समर्थ होते हैं, तो आकलन अर्थपूर्ण होता है। अन्यथा, वह गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के आकलन के बजाय, केवल परीक्षाओं में बच्चों के प्रदर्शन का निरीक्षणात्मक नियंत्रण करने का ऐवजी उपाय भर बनकर रह जाता है।

Bibliography

Chalmers, A F (1976) What is this thing called Science?, University of Queensland Press, Queensland, Australia.

Ferlie, E., Ashburner, L., Fitzgerald, L., and Pettigrew, A. (1996) The New Public Management in Action, Oxford University Press, New York.

Puckett, M. B., and J. K. Black. 1994. Authentic assessment of the young child: Celebrating development and learning. New York: Merrill.

Rowan (1990) Commitment and Control: Alternative Strategies for the Organizational Design of Schools, Review of Research in Education, Vol. 16, pp. 353-389.

सुजाता *वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,बंगलौर में शिक्षा के नेतृत्व तथा प्रबन्धन के क्षेत्र में शिक्षण तथा शोध में कार्यरत हैं। शोध की उनकी वर्तमान रुचियों के विषय हैं : भारत के सरकारी स्कूलों में स्कूल नेतृत्व का अध्ययन, स्कूलों की प्रभावशीलता पर नेतृत्व विकास कार्यक्रमों का प्रभाव; तथा स्कूलों में प्रचलन के समुदायों या सीखने के समुदायों का विकास। उनसे sujatha.rao@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: सत्येन्द्र त्रिपाठी*